Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education
Vol. 20, Issue No. 3, July-2023, ISSN 2230-7540

दलित चेतना का क्रांति सूर्य: उजास

विवेक कुमार*

पीएचडी शोधार्थी, हिंदी विभाग, महर्षि दयानंद विश्वविद्यालय, रोहतक

सारांश - *आधुनिक भारत में आज भी जातिगत विभेद एक कटु सत्य है और जातिगत उत्पीड़न उससे भी बड़ा कटु सत्य है। आज शास्त्रोक्त विधान की यह कटुता भारतीयों की नस-नस में समाई है। पग-पग पर दलित जातियों का तिरस्कार, उनके मानवीय व संवैधानिक अधिकारों का हनन, मंदिर आदि धार्मिक स्थल पर उनके जाने पर अघोषित मनाही और पिटाई की खबरें रोज अखबारों में छपती हैं। तरह-तरह के प्रलोभनों द्वारा उनके मतों का दुरुपयोग कोई छिपी हुई बात नहीं है। सांभरिया द्वारा रचित विवेच्य नाटक'उजास' इसी समस्या को लेकर उपस्थित होता है। यद्यपि वाल्मीकि बाहुल्य गांव है, पंचायत के चुनाव में सरपंच बनता है, कोई सवर्ण। उन्हें तो गांव के मंदिर में प्रवेश का अधिकार भी नहीं है। धार्मिक अंधास्था और मोक्ष प्राप्ति की चाह हर छोटे-बड़े में है, यहां। लेकिन दलित का तो मंदिर प्रवेश ही निषेध है। पंचायत के चुनाव में भावी सरपंच बनने का ख्वाब पालने वाला हर सख्श वाल्मीकि बस्ती वालों को मंदिर प्रवेश का प्रलोभन देकर उनके वोट हासिल करना चाहता है। हर कोई उम्मीदवार उनकी इसी धार्मिक भावना का शोषण करना चाहता है। यद्यपि, इस प्रयास में वे पहले पिटाई खा चुके हैं। चतुर वाग्वीर पंडित रामानंद उनको मंदिर प्रवेश का प्रलोभन देकर चुनाव जीतना चाहता है। वह डॉक्टर अंबेडकर द्वारा मनुस्मृति दहन और कालाराम मंदिर प्रवेश की याद दिलाकर उनमें जोश भरता है, सहानुभूति प्रकट करता है। लेकिन पढ़ा-लिखा कालू सिंह बस्ती वालों को इस शातिर खेल से आगाह करता है। वह मंदिर से अधिक स्कूल में पढ़ने पर जोर देता है, लेकिन भावुकता में वे कालिया की उपेक्षा कर पंडित रामानंद की बात मानते हैं और मंदिर प्रवेश करने के प्रयास में फिर ठुक-पिटकर बैठ जाते हैं। कालिया उन्हें डॉक्टर अंबेडकर के आदर्श वाक्य 'शिक्षित बनो, संगठित हो और संघर्ष करो।' की ओर ध्यान दिलाता है। साथ ही उसने समझाया कि सम्मानजनक ढंग से जीने के लिए बाबा की इस बात पर अमल करना होगा कि 'यदि अपनी दुर्दशा से पार पाना चाहते हो तो तुम्हें गंदे धंधे छोड़ने होंगे।' मंदिर प्रवेश की चाह में चतुर राजनीतिबाजों द्वारा दोबारा पिटवाने पर उन्हें सवर्ण समाज की छलना समझ आ जाती है और वे पढ़े-लिखे कालिया की बात मानकर मैला ढोने के औजारों की होली जला देते हैं और सरपंची के चुनाव में कालिया (कालू सिंह) को उम्मीदवार बनाते हैं और चुनाव जीत जाते हैं। सत्ता की चाभी पाने के लिए एकजुट होकर अपने दम पर चुनाव लड़ना एक नई क्रांति का आगाज है। परिवर्तन की एक नई बयार बहती दिखाई देती है।*

कीवर्ड - *जाति, वर्ण, अस्पृश्यता , मंदिर-प्रवेश, दलित-चेतना, क्रांति, संवैधानिक-अधिकार, मानव-गरिमा, दलित नाटक, शिक्षा, संगठन, संघर्ष, सत्ता, चाभी, मताधिकार, लोकतंत्र , सरपंची, संकल्प, विकल्प*

----------X----------

प्रस्तवाना

जाति आज भी भारत का कटु सत्य है और जातिगत उत्पीड़न उससे भी बड़ा सत्य है। जाति, वर्ण-व्यवस्था का एक विद्रूप, जिसने भेद-भाव का एक विकृत मनोविज्ञान तैयार किया। यह भेद-भेद-भाव का व्यवहार शास्त्रोक्त है, जो आज भी भारतीयों की नस में बसा हुआ है। स्वर्ण सामंती और यथास्थितिवादी ताकतों द्वारा यहां तथाकथित निम्न जातियों का का पग-पग पर तिरस्कार, उनके मानवीय व लोकतांत्रिक अधिकारों का हनन, सार्वजनिक स्थानों पर अघोषित मनाही, मंदिरों में प्रवेश करने पर उनकी पिटाई, मानमर्दन आज भी लोकतांत्रिक भारत का कटु सत्य है। यद्यपि आधुनिक भारत में स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान चले समाज सुधार और आधुनिक शिक्षा ने जाति के चट्टानी किले पर खूब चोटें मारी हैं, किंतु इसकी दंभी दीवारें टूटकर भी सीना तानें खड़ी हैं।।भारतीय संविधान में हमनें एक कल्याणकारी राज्य की स्थापना का सुनहरा सपना संजोया है।1 इसकी उद्देशिका में हमनें मानव गरिमा को अक्षुण्ण बनाए रखने की शपथ खाई है।2 किंतु यथास्थितिवाद को यह कतई स्वीकार नहीं। संविधान निर्माता बाबा साहेब डा अम्बेडकर ने

www.ignited.in

शिक्षा प्राप्ति में दलितों का बदलता हुआ सुखद भविष्य देखा था। उनका मानना था कि शिक्षा स्वस्थिति का बोध कराती है और परिवर्तन का सबसे बड़ा हथियार है। यदि दलित शिक्षा पा लेते हैं तो तो उन्हें अपनी दुर्गति के मूल कारण का पता लग जाएगा और वे उसके खिलाफ ताल ठोंककर खड़े हो जाएंगे। इसलिए, डॉ अंबेडकर ने कहा था, "शिक्षा शेरनी का दूध है, जो पीएगा, वो गुर्राएगा।" इसके साथ ही दलित को अपनी हालत बदलने के लिए संगठित होकर संघर्ष करना पड़ेगा। उनकी सूत्रत्रयी "शिक्षित हों, संगठित हो, संघर्ष करो" दलित जीवन का अचूक प्रगति मंत्र है। और यही सूत्रत्रयी दलित चेतना का आधार है। अर्थात दलितों का अपनी अस्मिता और मानवीय व संवैधानिक अधिकारों के प्रति जागरूकता नाम ही दलित चेतना है।

संस्कृत की बहुत प्रसिद्ध सूक्ति है, 'काव्येषु नाटकं रम्यम्।' नाटक न केवल एक सर्वाधिक लोकप्रिय व रूचिकर विधा है, अपितु परिवर्तन का भी बहुत बड़ा हथियार है। बकौल सर्वेश कुमार मौर्य, " तकरीबन साठ से अधिक नाटककारों ने दो सौ से ज़्यादा दलित नाटकों का सृजन किया है। इस उपेक्षित साहित्य की संख्या ही हमें आश्चर्य में नहीं डालती बल्कि उनकी अंतर्वस्तु का क्रांतिकारीपन भी सोचने को बाध्य करता है।"3 स्वामी अछूतानंद से लेकर ललई सिंह यादव, डॉ माता प्रसाद सुशीला टाकभौरे और रत्नकुमार सांभरिया तक नाटक सृजन की लंबी परंपरा है, जिसमें शोषण से मुक्ति की छटपटाहट, यथास्थितिवाद से टकराव, शिक्षा प्राप्ति के प्रति उत्कट इच्छा और परिवर्तन की तीव्र आकांक्षा स्पष्टतः झलकती है।4

रत्नकुमार सांभरिया एक मिशनोन्मुख परिवर्तनकामी साहित्यकार हैं। उनकी रचनाओं में परिवर्तन की एक गूंज सुनाई पड़ती है। उनके द्वारा रचित नाटक 'उजास' वाल्मीकि समाज के मैला ढोने वाले कतिपय परिवारों की अंधेरी जिंदगी में आशा का एक नया उजाला भरने का साहित्यक प्रयास है, जो प्रगति के लिए रौड-मैप हो सकता है। साहित्य समाज का दर्पण ही नहीं, अपितु उसका दिग्दर्शक भी होना चाहिए। इस नाटक में दो अंक, सात दृश्य व छः प्रमुख पात्र हैं। कथित भगवान में श्रद्धा रखने वाली संती, अपढ़ समाज की प्रतिनिधि है। कालिया, समाज का पढ़ा-लिखा, तार्किक और परिवर्तन का आकांक्षी क्रांतिकारी युवा है। पंडित रामानंद प्रतिष्ठाकांक्षी अवसरवादी ब्राहमण है। सेवानंद कट्टर जातिवादी, यथास्थितिवाद का पोषक व समाज का शोषक है। शेर सिंह गांव का पूर्व सरपंच है। भोलू भोला-भाला व्यक्ति है।

विडंबना यह है कि, जिस धर्म-दर्शन ने भेदकारी व्यवस्था व्यवस्था पैदा की, शोषण किया, दलित उस विषैले मनोविज्ञान से छुटकारा पाना नहीं चाहता। नाटक में बात ही मंदिर प्रवेश की प्रबल इच्छा से शुरू होती है। सुबह-सुबह मंदिर में भगवान की आरती गाई जा रही है -" ओम जय जगदीश हरे... तुम करुणा के सागर, सबके प्राणपति....." 5 संती भी झाड़ू-बुहारी कर मंदिर के बाहर खड़ी होकर साथ-साथ आरती गाती जाती है। उसे यह भी पता है कि मंदिर में जाते ही अंधभक्त दलित पर कितनी करुणा बरसाएंगे? भावी सरपंच बनने का सपना संजोये पंडित रामानंद जब संती को मंदिर के अंदर जाकर भगवान के दर्शन करने का आग्रह करता है, तो संती सहज मन कहती है," महाराज, हम छोटी जात हैं। मंदर बड़ी जात का है, महाराज। भगवान भरस्ट हो जाएंगे, महाराज।"6 वस्तुत: कभी भोले-भाले मनुष्यों की जिस अज्ञानता और भय ने ईश्वर को जन्म दिया था, वह वंचकों के हाथों उनके शोषण का औजार बन गया। छल-बल-कौशल में प्रवीण वाग्वीरों ने उसके चारों ओर पाप-पुण्य, स्वर्ग-नर्क, पात्र-अपात्र, स्पृश्य-अस्पृश्य
आदि का ऐसा मकड़जाल बुन दिया, जिसे समझना आम आदमी के बस की बात नहीं रही। ' स्त्री शूद्रों नाधियताम ' कहकर उन्हें शिक्षा क्षेत्र से बाहर कर दिया। एक बड़े तबके का दिमाग बिना शिक्षा कुंद कर दिया। जब पंडित रामानंद संती से कहता है-" ये तो आदमी की खुराफात है, सरासर। हवा-पानी की तरह भगवान सबमें व्याप्त है। सबके हैं, वे। सर्वव्यापी कहा है, उनको।"7 तो नाटककार एक अपढ़ संती से कथित भगवान के अस्तित्व पर चोट करवाता है, " हमसे तो कोसों दूर हैं भगवान।

सरपंची के लिए महत्वाकांक्षी रामानंद फिर कहता है, "मैं तो सालों-साल शहर में रहा हूं। ऐसा अंधेर नहीं देखा। आजादी के समय मेरा जन्म हुआ था,तब भी यही हाल था, यहां। और इतने वर्षों के बाद भी वही हाल है। परिवर्तन की आहट तक नहीं है, गांव में।"8 रामानंद भारत की इस विद्रूपता का सच्चा बखान तो करता है, किंतु दलितों के साथ यह उसकी मौसमी सहानुभूति है और पाखंडपूर्ण चिंता है। क्योंकि उसे पता है है कि इस गांव में वाल्मीकि मतदाताओं का बाहुल्य है। सरपंची का गणित उनके हाथों बनता-बिगड़ता है। वास्तविकता यह है कि कि उनकी भगवान में अगाध आस्था ही उन्हें ले डूबी।आज भी मंदिर प्रवेश,भगवद्-दर्शन और तथाकथित मुक्ति की चाह से दलित मुक्त नहीं हुए हैं। उन्हें नहीं पता कि कि पंडित रामानंद में यह आत्मीयता अकारण कैसे हो सकती है ? इस छद्म आत्मीयता के कितने भयंकर परिणाम हो सकते हैं ! वह संती को आश्वस्त करता है कि वह उन्हें मंदिर प्रवेश करवाएगा और पूरी वाल्मीकि बस्ती को इकट्ठा करने के लिए कहता है।

यद्यपि, संती को पता है कि वे पहले भी इस प्रकार के षड्यंत्रकारी अभियान में फंसकर पिट चुके हैं, लेकिन मंदिर प्रवेश प्रवेश की चाह फिर भी बनी हुई है। बस्ती की चौपाल में बच्चे से

लेकर बूढ़े तक इकट्ठा हो रहे हैं। पंडित रामानंद, सुनाराम, रामबिहारी के बस्ती में आने पर वे पुलक उठते हैं। श्रद्धा के सागर में डूब जाते हैं। पंडित रामानंद को अपना उद्धारकर्ता मानकर वे रामानंद के मुख मंदिर प्रवेश की बात सुनकर फूला नहीं समाते हैं। लेकिन, कालिया जैसा पढ़ा-लिखा युवक इस स्वार्थपूर्ण खेल को बखूबी समझ जाता है। इसके पीछे छिपी मक्कारी को बूझ जाता है। वह बार-बार बस्ती वालों को इस बारे चौकन्ना करता है, लेकिन भावुकता का अतिरेक पागलपन की सीमा लांघ जाता है। अंततः होता वही है, जो प्रखर युवा कालिया का अनुमान था। रामानंद के उकसाने पर वे सोत्साह मंदिर प्रवेश के दौरान यथास्थितिवादी स्वर्णों द्वारा पिट जाते हैं, लहूलुहान हो जाते हैं। मौका देखकर पंडित रामानंद पीछे से खिसकने लगता है तो कालिया उसका गला पकड़ लेता है और पिटाई करता है। पंडित रामानंद पर हाथ उठाना, एक क्रांति का आगाज है। वह इस अर्थ में भी कि कालिया अपनी बस्ती वालों को कोसता है, " आपने देखा देखा हम ठुक-पिटकर बैठ गए।" आज कालिया उन्हें अपने समाज की दुर्गति का कारण समझाता है।

वह सेवानंद पुजारी की वाल्मीकि समाज के प्रति सोच को बताता है, " जो लोग गंदगी उठाते हैं, सिर पर मैला ढोते हैं, गंदगी का कीड़ा यानी सुअर पालते और खाते हैं, उन्हें मंदिर में आने दिया जाए ? भगवान भ्रष्ट हो जाएंगे।" इसलिए, कालिया उन्हें समझाता है,"जब तक हम गंदगी उठाते रहेंगे, सुअर जैसे गंदे जानवर का मांस खाते रहेंगे, चलता-फिरता नर्क बने रहेंगे। घृणा का पात्र सम्मान का हकदार हुआ है?"9

सचमुच, यह घटना क्रांति का आगाज साबित हुई। कालिया ने गर्म लोहे पर चोट कर आकार में ढाला। कालिया का विरोध करने वाले बस्ती के लोग असलीयत समझ गए। कालिया के के समझाने पर उन्होंने झाड़, पंजे, परात की होली जला दी। सुअरों को जंगल की ओर भगा दिया। उन्होंने संकल्प लिया कि वे इस गंदे व अपमानजनक धंधे को छोड़कर कोई भी काम करने के लिए तैयार हैं। बस्ती वालों की इस विषयक उहापोह को मिटाते हुए हुए कालिया कहता है, " संकल्प स्वयं विकल्प की राह बन जाया करता है, काका। जिन लोगों ने अपने पैतृक धंधे से छुटकारा पाया, कोई भूखा मरा है, उनमें।"10 वह समझता है, इसीलिए, बाबा साहेब डा अम्बेडकर ने कहा था कि यदि अपनी दुर्दशा से पार पाना चाहते हो तो तुम्हें अपने गंदे धंधे छोड़ने होंगे। "गंदे धंधे छोड़ने वालों ने बाबा साहेब के 'शिक्षित बनो' के सिद्धांत को अपनाया। मेहनत-मजदूरी की, लेकिन अपने बच्चों को पढ़ाया।आज उनके पास मान-सम्मान, शिक्षा, पद और पैसा सब है।"11 इससे पहले भी कालिया नाटक के प्रथम अंक के प्रथम दृश्य में पंडित रामानंद से प्रतिवाद करते हुए कहता है, "रामानंद जी, मंदिर प्रवेश करवाने से कौन सा भला हो जाएगा, हमारा? कुछ करना चाहते हो तो हमारे बच्चों को शिक्षा दिलाओ। हमारे लिए स्कूल मंदिर हैं, शिक्षा मूर्ति है।"12 यहां नाटककार यही समझाना चाहता है कि शिक्षा एक ऐसा हथियार है, जिससे हर बाधा बाधा पार की जा सकती है। शिक्षा प्रगति का मार्ग प्रशस्त करती है। कालिया यहां महात्मा फुले की शिक्षा के प्रति लगन और प्रतिबद्धता की याद दिलाता हुआ लाठी ठोंक कर कहता है - महात्मा फुले ने कहा है-

"शिक्षा के अभाव में बुद्धि गई,

बुद्धि के अभाव में नीति गई,

नीति के अभाव में गति गई,

गति के अभाव में धन गया,

धन के अभाव में शूद्र हताश हुए,

और गुलाम होकर रह गए,

इतना अनर्थ,

अकेले शिक्षा के अभाव में हुआ।" 13

नाटक में एक और महत्वपूर्ण प्रश्न उठाया गया है। लोकतंत्र में सबको मत देने का अधिकार है। सबके मत का मूल्य मूल्य बराबर है। लेकिन, विडंबना यह है कि यहां मतदाता की कमजोरी को भुनाने का गुनाह किया जाता है। लोकतंत्र को जीते जी मारा जाता है। कहीं झूठे सब्जबाग दिखाए जाते हैं, कभी पैसे फेंके जाते हैं, कभी दारू बहाई जाती है और कभी दलितों को अपने पक्ष में मतदान के लिए धमकाया जाता है। अशिक्षा गरीब गरीब के मत का यहां खूब दुरुपयोग किया जाता है। नाटक में पूर्व सरपंच शेरसिंह ने मंदिर प्रवेश का प्रलोभन देकर अपने पक्ष में मतदान करवाया। लेकिन, मंदिर प्रवेश कहां हुआ? वे ठुक-पिटकर बैठ गए। शेरसिंह पास न आया। इस बार भी सरपंच बनने की महत्वाकांक्षा पाले चतुर पंडित रामानंद उसी मंदिर प्रवेश को हथियार बनाना चाहता है। कालिया ने पूरी बस्ती को आगाह किया, किंतु धर्मांधता ने आंखों पर पर्दा डाल दिया। आखिर फिर पिट बैठे।

डॉक्टर अंबेडकर की सूत्रत्रयी का दूसरा व तीसरा मंत्र है, संगठित हो, संघर्ष करो। दलित के संदर्भ में मतदान का अधिकार से अर्थ है, सत्ता तक पहुंचना। उन्होंने कहा था, राजनीति वह चाभी है, जिससे विकास के द्वार खुलते हैं। कालिया बस्ती वालों को एकजुट करता है और लाठी ठोंक कर गांव वालों के सामने कहता है, " नहीं ठुकेंगे, नहीं पिटेंगे, एकजुट एकजुट होकर मर मिटेंगे।" कालिया सारे गांव के सामने नारे

www.ignited.in

लगवाता है -
"धंधा फूंक दिया, बंधन तोड़ दिया, नया सूरज आएगा।"

इसके बाद वाल्मीकि बस्ती का बुजुर्ग हाथ उठाकर कहता है, गांव का सरपंच कैसा हो?
सब:(हाथ उठाकर) कालू सिंह जैसा हो।"14

अंततः पूरे गांव को मत बाहुल्य का सम्मान करना पड़ता है और विरोधी भी कालू सिंह को मत देने की बात कहते हैं।

यहां उल्लेखनीय बात है कि 'उजास' नाटक संपूर्ण दलित नाट्य साहित्य में वाल्मीकि समाज की दशा एवं दिशा पर रचित अपने ढंग का पहला नाटक है। नाटक की खूबसूरती यह भी है कि यह अपने ऊपर होने वाले अत्याचारों के प्रतिशोध की बजाय अपने सुधार का मार्ग अपनाते हैं। वे बाबा साहेब डा अम्बेडकर द्वारा सुझाए गए उपचार के रास्ते अपनाते हैं। वे उन गंदे धंधों को छोड़ने के लिए कृतसंकल्प होते हैं, जिनके कारण उन्हें समाज में अपमानित होना पड़ता है। जिनके कारण उन्हें हीनत्व बोध से ग्रस्त रहना पड़ता है। 'स्कूल हमारे मंदिर हैं, पुस्तकें हमारी मूर्ति हैं' का नवजीवनदायी मुहावरा अपनाते हैं। एकजुट होकर सत्ता की चाभी (सरपंची) हथियाते हैं। पंडित रामानंद द्वारा समाज के विकृत मनोविज्ञान, दलितों के साथ होने वाले दुर्व्यवहार की आलोचना, मनुस्मृति दहन का समर्थन आदि राजनीतिक विवशता का सुंदर निदर्शन है।

अभिनेयता की दृष्टि से भी यह सफल नाटक है। कम पात्र संख्या, सामान्य मंच सज्जा नाटक को मंचन की दृष्टि से उपयुक्त बनाते हैं। पात्रानुकूल भाषा, आंचलिक शब्दों का प्रयोग,चुटीले तर्कपूर्ण संवाद नाटक को रोचक व संप्रेषणीय बनाते हैं।

संदर्भ ग्रंथ

1. अनुच्छेद 38,राज्य की नीति के निदेशक तत्व, भाग-4, भारत का संविधान।
2. प्रस्तावना, भारत का संविधान
3. मौर्य सर्वेश कुमार, संपादक, दलित नाटक की आलोचना, पृष्ठ 16
4. वही, पृष्ठ 16
5. रत्नकुमार सांभरिया, वीणा, भभूल्या, उजास तीन नाटक, अंक -1, दृश्य -1, पृष्ठ 1
6. वही, पृष्ठ 167
7. वही, पृष्ठ 167
8. वही, पृष्ठ 167
9. वही, पृष्ठ 195
10. वही, पृष्ठ 195
11. वही, पृष्ठ 195
12. वह, पृष्ठ 177
13. वही, पृष्ठ 184
14. वही पृष्ठ 199

Corresponding Author

विवेक कुमार*

पीएचडी शोधार्थी, हिंदी विभाग, महर्षि दयानंद विश्वविद्यालय, रोहतक